

सुखवंत सिंह

बनाम

पंजाब राज्य

28 मार्च, 1995

[डॉ. ए. एस. आनंद और फैज़ान उद्दीन न्यायाधिपतिगण]

भारतीय दंड संहिता, 1860:

धारा 302-हत्या का मुकदमा-पोस्टमॉर्टम के समय मृतक का भाई मृतक की पहचान करने के लिए उपस्थित- तब उपस्थित नहीं था जब शव को अस्पताल लाया गया था-प्रभाव के तौर से - पिस्तौल और गोलियों की बरामदगी साथ ही एक खाली-बैलिस्टिक विशेषज्ञ की राय प्राप्त करने में विफलता-प्रतिपरीक्षा के लिए गवाहों को प्रस्तुत करना- न केवल अभियोजन मामले की विश्वसनीयता को प्रभावित करता है, बल्कि विश्वसनीयता से महत्वपूर्ण रूप से भी वंचित करता है।

साक्ष्य अधिनियम, 1872:

धारा 138-परीक्षण या गवाह- केवल प्रतिपरीक्षा के लिए गवाहों को प्रस्तुत करना-मामले में अभियोजन पक्ष द्वारा उनकी जांच करने में

विफलता के बराबर है अभियोजन मामले की विश्वसनीयता को प्रभावित करता है-इसकी विश्वसनीयता से भी महत्वपूर्ण रूप से विमुख करता है।

अपीलार्थी पर 'ए' की हत्या के लिए आईपीसी की धारा 302 के तहत अपराध का मुकदमा चलाया गया था। उसे दोषी ठहराया गया और आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। हत्या का कारण अपीलार्थी द्वारा यह संदेह बताया गया था कि मृतक और उसका भाई अपीलार्थी के माध्यम से हुई सगाई को तोड़ने के लिए जिम्मेदार थे।

इस अपील में, दोषसिद्धि और सजा को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि एकमात्र चशमदीद गवाह की मुकदमे में जाँच की गयी थी नामतः पी. डब्ल्यू. 3 उस पर न केवल इसलिए भरोसा नहीं किया जा सकता था क्योंकि वह एक इच्छुक गवाह था, मृतक का भाई होने के नाते, बल्कि इसलिए भी कि उसका सबूत चिकित्सकीय साक्ष्य द्वारा गलत साबित किया गया, जिससे पता चला कि चोटें तब लगी थीं जब मृतक ने प्रकृति के आह्वान का जवाब दे दिया था, न कि पहले जैसा कि पीडब्लू 3 द्वारा सुझाया गया था।; कि मृतक के शरीर को पीडब्लू 4 और 5 द्वारा अस्पताल लाया गया था, जिनकी जांच नहीं की गई थी और पीडब्लू 3 मृतक के साथ अस्पताल नहीं गया था, और ये दुर्बलताएं थीं। पी. डब्ल्यू. 3 की अप्रमाणित गवाही के आधार पर अपीलार्थी की दोषसिद्धि को बनाए रखना असुरक्षित बना दिया।

अपील को अनुमति देते हुए, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया -

1. पीडब्लू 3 मृतक का बड़ा भाई है। वह अकेला अभियोजन पक्ष द्वारा की परीक्षित किया गया प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य है,। अस्पताल में शव के आने के तुरंत बाद डॉक्टर द्वारा पुलिस स्टेशन को भेजे गए प्रदर्श पी.-5 में उनके नाम की अनुपस्थिति ने उस समय घटना स्थल पर पीडब्लू 3 की उपस्थिति के बारे में कुछ संदेह पैदा कर दिया जब मृतक को गोली मार दी गई थी। मानवीय आचरण के सामान्य क्रम में मृतक का असली भाई घायलों के साथ अस्पताल जाता। मृतक की पहचान पोस्टमॉर्टम जाँच के समय मृतक, एक्स. पी.-5 से पी. डब्ल्यू. 3 के नाम की अनुपस्थिति के दोष को ठीक नहीं कर सकता है क्योंकि पोस्टमॉर्टम जाँच अगले दिन सुबह 11.00 पर आयोजित की गई थी। अभिलेख पर कोई स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं है, और न ही इस न्यायालय के समक्ष एक्स. पी.-5 से पी. डब्ल्यू. 3 के नाम की अनुपस्थिति की व्याख्या करने के लिए कोई तर्क दिया गया है जिसमें यह दर्ज किया गया था कि पी. डब्ल्यू. 4 और 5 मृतक को अस्पताल लाए थे।

2.1. संभावना है कि पीडब्लू 3 अस्पताल में बाद में आया होगा पीडब्लू 4 और 5 द्वारा अपने मृत भाई को अस्पताल से हटाने के बारे में जानने के बाद इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा, यह पाया गया है कि विशेष रिपोर्ट अगले दिन सुबह 6:30 बजे इलाका

मजिस्ट्रेट के पास पहुंची। इलाका मजिस्ट्रेट द्वारा विशेष रिपोर्ट की प्राप्ति में देरी के बारे में रिकॉर्ड पर कोई स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं है, विशेष रूप से जब इलाका मजिस्ट्रेट की अदालत और पुलिस स्टेशन एक-दूसरे के काफी करीब हैं। यह तथ्य कि पोस्टमॉर्टम जाँच के समय पेट और मूत्राशय खाली पाए गए थे, यद्यपि पी. डब्ल्यू. 3 द्वारा सशपथ बतायी की गई स्थिति के विपरीत स्थिति का संकेत देते हैं, कि मृतक ने गोली लगने से पहले प्रकृति के आह्वान का जवाब दिया था, लेकिन इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है कि मृतक ने चोट लगने के बाद और उसकी मृत्यु से पहले शौच और पेशाब किया होगा।

2.2. अभिलेख पर सामग्री के महत्वपूर्ण विश्लेषण से, यह पाया जाता है कि मृतक के भाई पी. डब्ल्यू. 3 की एकमात्र गवाही पर भरोसा करना सुरक्षित नहीं होगा, उसके साक्ष्य की स्वतंत्र पुष्टि किए बिना। उन दुर्बलताओं के कारण जो उनकी गवाही को पूरी तरह से विश्वसनीय नहीं बनाते हैं और चूंकि वर्तमान मामले में, रिकॉर्ड पर ऐसी कोई स्वतंत्र पुष्टि उपलब्ध नहीं है, इसलिए केवल पी. डब्ल्यू. 3 की गवाही पर भरोसा करना असुरक्षित होगा, अपीलार्थी की दोषसिद्धि को बनाए रखने के लिए। अभियोजन पक्ष अपीलार्थी के खिलाफ मामले को संदेह से परे स्थापित करने में सक्षम नहीं रहा है। इसलिए, अधीनस्थ न्यायालय ने अपीलार्थी को

सजा सुनाने में गलती की। उसकी दोषसिद्धि और सजा को कायम नहीं रखा जा सकता है।

3.1 साक्ष्य अधिनियम की धारा 138 में परिकल्पना की गई है कि एक गवाह पहले मुख्य परीक्षण में पूछताछ की जाए और फिर प्रतिपरीक्षा के अधीन किया जाए और कोई स्पष्टीकरण मांगने के लिए, अभियोजन पक्ष द्वारा गवाह से फिर से पूछताछ की जा सकती है। केवल प्रतिपरीक्षा के लिए गवाह प्रस्तुत करने का कोई अर्थ नहीं है। वास्तव में, प्रतिपरीक्षा के लिए गवाह को प्रस्तुत करना अभियोजन पक्ष द्वारा गवाह को छोड़ने के बराबर है क्योंकि वह ऐसा करने का विकल्प नहीं चुनता है कि मुख्य परीक्षण में उसकी जाँच करें। तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 के अधिनियमन के बाद से सत्र विचारणों में प्रतिपरीक्षा के लिए गवाहों को प्रस्तुत करने की प्रथा का अक्सर सहारा लिया जाता था, जहां एक पूर्ण-स्तरीय मजिस्ट्रेट जांच के तहत एक ऐसे मामले में आयोजित की जाती थी, जिसकी सुनवाई विशेष रूप से सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय द्वारा अध्याय 18 में निर्धारित प्रक्रिया और उस जांच के अनुसार की जा सकती थी और उसमें अभियोजन पक्ष को अपने सभी गवाहों का परीक्षण करने की आवश्यकता होती थी। उस संहिता की धारा 288 के तहत कमिटिंग मजिस्ट्रेट द्वारा इस प्रकार दर्ज किए गए गवाहों के साक्ष्य को, सत्र न्यायाधीश के विवेक पर, मुकदमे में ठोस साक्ष्य के रूप में माना जा

सकता है, और गवाहों को जिरह के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है। हालांकि, 1955 के संशोधन ने पुलिस रिपोर्ट पर दर्ज मामलों के संबंध में न्यायिक जांच में अभियोजन पक्ष के गवाहों की परीक्षा को केवल उन लोगों के लिए प्रतिबंधित कर दिया, जिन्हें घटना का एक दृष्टिगत संस्करण देना था।

3.2 बॉम्बे, केरल, कलकत्ता, मद्रास और पंजाब उच्च न्यायालयों द्वारा 1898 की संहिता की धारा 288 के प्रावधानों के बावजूद यह विचार सर्वसम्मति से लिया गया है कि ऐसी कोई प्रक्रिया नहीं है जिसके द्वारा अभियोजन पक्ष को केवल प्रतिपरीक्षा के लिए गवाह पेश करने की अनुमति दी गई है, बिना किसी प्रमुख परीक्षा के जिसके संबंध में ऐसे गवाह से प्रतिपरीक्षा की जा सकती हो। गवाह को जिरह के लिए पेश करने की प्रथा को इन उच्च न्यायालयों द्वारा लगातार हतोत्साहित किया गया है और इसकी निंदा भी की गई है।

3.3 तत्काल मामले में, अधीनस्थ न्यायालय ने अभियोजन पक्ष को पी. डब्ल्यू. 4 और पी. डब्ल्यू. 5 की केवल प्रतिपरीक्षा के लिए गलत तरीके से अनुमति दी। निविदा देना। पी. डब्ल्यू. 4 और पी. डब्ल्यू. 5 दोनों, अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, घटना के चश्मदीद गवाह थे और मृतक को अस्पताल ले गए थे। उनका साक्ष्य एक महत्वपूर्ण प्रकृति का था जो अभियोजन पक्ष की कहानी को उजागर करने के लिए आवश्यक था।

केवल प्रतिपरीक्षा के लिए उनके पेश किए जाने का प्रभाव अभियोजन पक्ष द्वारा मुकदमे में उनकी जांच करने में विफलता के बराबर है। उनकी परीक्षण न किया जाना अभियोजन पक्ष के मामले की विश्वसनीयता को गंभीर रूप से प्रभावित करता है और इसकी विश्वसनीयता से महत्वपूर्ण रूप से वंचित करता है।

वीरा कोरवन और अन्य बनाम सम्राट, ए. आइ. आर. (1929) मद्रास, 906; सादेप्पा सिरेप्पा मुतगी और अन्य बनाम सम्राट, ए. आइ. आर. (1942) बॉम्बे, 37; सम्राट बनाम कासमल्ली मिर्जल्ली, ए. आइ. आर. (1942) बॉम्बे, 71; केसर सिंह और एक अन्य बनाम राज्य, ए. आइ. आर. (1954) पंजाब, 286; धीरेन्द्र नाथ बनाम राज्य, ए. आइ. आर. (1952) कलकत्ता, 621; छोटा सिंह बनाम राज्य, ए. आइ. आर. (1964) पंजाब, 120 और थङ्गथेथिल हमसा बनाम केरल राज्य, ए. आइ. आर. (1967) केरल, 16, अनुमोदित।

द स्टेट ऑफ यू. पी. एंड अन्य बनाम जग्गो उर्फ जगदीश और अन्य, ए. आइ. आर. (1971) एस. सी. 1586, लागू नहीं होना स्थापित है।

4. पीडब्लू 6 सहायक उप-निरीक्षक द्वारा गिरफ्तारी के समय अपीलार्थी के कब्जे से घटनास्थल से एक खाली बरामद किया गया था, एक पिस्तौल और कुछ कारतूस बरामद किए गए थे। लेकिन अभियोजन पक्ष ने बरामद की गई खाली और जब्त की गई पिस्तौल को बैलिस्टिक

विशेषज्ञ को परीक्षण और विशेषज्ञ की राय के लिए नहीं भेजा। तुलना अपराध और अभियुक्त के बीच संबंध साक्ष्य प्रदान कर सकता था। यह फिर से अभियोजन पक्ष की ओर से एक चूक है जिसके लिए न तो अधीनस्थ न्यायालय में और न ही इस न्यायालय के समक्ष कोई स्पष्टीकरण दिया गया है। ऐसे मामलों में जहां आग्नेयास्त्रों से चोटें आती हैं, एक आरोपी को अपराध से जोड़ने के लिए बैलिस्टिक विशेषज्ञ की राय काफी महत्वपूर्ण है। ऐसे मामलों में अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष विशेषज्ञ की राय पेश करने में विफलता अभियोजन पक्ष के मामले की विश्वसनीयता को काफी हद तक प्रभावित करती है।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील सं 433/1985

विशेष न्यायालय फिरोजपुर के केस नं. 301/84 (विचारण सं.61/85) में 10.4.85 दिनांकित निर्णय और आदेश से

उमा दत्ता, टी. सी. शर्मा, राजीव शर्मा, सुश्री नीलम शर्मा और अजय शर्मा अपीलार्थी की ओर से।

प्रत्यर्थी की ओर से सुधीर वालिया और आर. एस. सूरी।

न्यायालय का निम्नलिखित निर्णय निम्न द्वारा दिया गया था

डॉ. आनंद न्यायाधिपति.

अपीलार्थी पर धारा 302 आई. पी. सी. के तहत अपराध के लिए एक अजमेर सिंह की दिनांकित 11.07.84 पर लगभग 7:30 बजे हुई हत्या के संबंध में मुकदमा चलाया गया था। फिरोजपुर की विशेष न्यायाधीश के न्यायालय ने उन्हें उक्त अपराध के लिए दोषी ठहराया और उन्हें आजीवन कारावास की सजा सुनाई। इस अपील के माध्यम से, आतंकवादी प्रभावित क्षेत्र (विशेष न्यायालय) अधिनियम, 1984 की धारा 14 के तहत, अपीलार्थी ने अपनी दोषसिद्धि और सज़ा को चुनौती दी है।

अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, अपीलार्थी पाल सिंह की बहन से विवाहित है। पाल सिंह की बेटी और कश्मीर सिंह के बेटे लखमीर सिंह के बीच अपीलार्थी के माध्यम से सगाई हुई थी। मृतक, अजमेर सिंह और उसके भाई, पीडब्लू 3 गुरमेज सिंह के कश्मीर सिंह के साथ दोस्ताना संबंध थे, लेकिन किसी न किसी कारण से, उस सगाई को तोड़ दिया गया और घटना से लगभग 3 दिन पहले लखमीर सिंह की शादी किसी और लड़की से हो गई थी। अपीलार्थी को संदेह था कि अजमेर सिंह मृतक और उनके भाई गुरमेज सिंह पीडब्लू-3 इस सगाई को तोड़ने के लिए जिम्मेदार थे। लगभग 7:30 बजे, गुरमेज सिंह पीडब्लू 3, अजमेर सिंह, मृतक और रघबीर सिंह, पीडब्लू 4 के साथ शौच के लिए खेतों में जा रहे थे और जब वे गाँव के तालाब पर पुल के पास पहुंचे, तो अपीलकर्ता निहंग का वस्त्र पहनकर दूसरी तरफ से आया और कहा कि वह उन्हें सगाई तोड़ने के लिए

सबक सिखाएगा। इसके तुरंत बाद अपीलार्थी ने चोले (वस्त्र) के नीचे से एक पिस्तौल निकाली जो उसने पहनी हुई थी और अजमेर सिंह पर गोली चलाई। अजमेर सिंह द्वारा चेतावनी की आवाज़ दिए जाने पर, पीडब्लू3 और पीडब्लू4 अपीलार्थी पिस्तौल लेकर भाग गया। एक मेजर सिंह, पीडब्लू 5, जो पास के खेत में मौजूद थे, ने भी इस घटना को देखा। अजमेर सिंह को हवेली में ले जाया गया और जब उन्हें मलोट के अस्पताल में स्थानांतरित किया जा रहा था, तो कश्मीर सिंह की ट्रैक्टर ट्रॉली में उनकी मृत्यु हो गई। अस्पताल पहुंचने पर डॉक्टर ने अजमेर सिंह को मृत घोषित कर दिया। डॉ. संत सिंह, एक्स. पी.-5 द्वारा अस्पताल में मृतक अजमेर सिंह के पुलिस स्टेशन पहुंचने की सूचना भेजे जाने पर, ए. एस. आई. पी. डब्ल्यू. 6, श्री रघबीर सिंह, अस्पताल गए और लगभग 11.45 पी. एम. पर एक्स. पी.-4, गुरमेज सिंह का बयान दर्ज किया। बयान पर मामला दर्ज करने के लिए पुलिस स्टेशन भेजा गया था और इसके आधार पर औपचारिक एफ. आई. आर. एक्स. पी.-4/बी तैयार की गई थी। आई. पी. सी. की धारा 307 और शस्त्र अधिनियम की धारा 25 के तहत मामला दर्ज 12.10 पर मध्यरात्रि 12.7.1984 पर पंजीकृत किया गया था। विशेष रिपोर्ट की एक प्रति को इलाका मजिस्ट्रेट के पास भेजा गया और उन्होंने लगभग 6:30 बजे 12.7.1984 पर उसको प्राप्त किया। जाँच रिपोर्ट एक्स. पी.-2 तैयार करने के बाद, शव को पोस्टमॉर्टम के लिए भेजा गया, जिसे

डॉ. संत प्रकाश सिंह, वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारी पी. डब्ल्यू. 1 द्वारा 12 जुलाई, 1984 को सुबह लगभग 11.00 पर किया गया। डॉक्टर ने मृतक के बंदूक की गोली से कारित चोटें पाई और कहा कि मौत चोट संख्या 1 के परिणामस्वरूप सदमे और रक्तस्राव के कारण हुई थी, जो प्रकृति के सामान्य क्रम में मौत का कारण बनने के लिए पर्याप्त पाई गई थी। एसआई रघुबीर सिंह, पीडब्लू 6 द्वारा जांच के दौरान घटना स्थल की रफ नक्शा मौका तैयार किया गया था। घटनास्थल से, खून से सनी मिट्टी के साथ-साथ एक खाली भी फ़र्द प्रदर्श पी.-8 के माध्यम से एकत्र किया गया था। इन्हें अलग-अलग सीलबंद पार्सल में सुरक्षित किया गया था। अपीलार्थी को 8.8.1984 पर गिरफ्तार किया गया था और गिरफ्तारी के समय उसके पास एक पिस्तौल और 7 जिंदा कारतूस पाए गए जिन्हें पुलिस ने जब्त कर लिया था।

मुकदमे में अभियोजन पक्ष ने डॉ. संत प्रकाश सिंह, पीडब्लू1, ड्राफ्ट्समैन अजीत शर्मा, पीडब्लू2, गुरमेज सिंह पीडब्लू3 और रघुबीर सिंह एसआई पीडब्लू6 से पूछताछ की। रघुबीर सिंह पीडब्लू 4 और मेजर सिंह पीडब्लू 5, दो अन्य चश्मदीद गवाहों को केवल जिरह के लिए प्रस्तुत किया गया था। अपीलार्थी ने धारा 313 Cr.P.C के तहत अपने बयान में अभियोजन पक्ष के आरोपों से इनकार किया। इसके बाद, अपीलार्थी को आई. पी. सी. की धारा 302 के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया

और सजा सुनाई गई। शस्त्र अधिनियम की धारा 25 के तहत मामले की सुनवाई अलग से की गई।

अपीलार्थी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि अभियोजन पक्ष गुरमेज सिंह, पीडब्लू 3 द्वारा मुकदमे में एकमात्र चश्मदीद ने जांच की जा सकती है। इस पर भरोसा नहीं किया जा सकता, क्योंकि न केवल मृतक का भाई होने के नाते वह अभियोजन पक्ष के मामले में सम्बंधित साक्ष्य था, बल्कि इसलिए भी कि उसके साक्ष्य चिकित्सा साक्ष्य से गलत साबित हुई, जिससे पता चला कि मृतक का पेट और मूत्राशय खाली थे, जिससे यह पता चलता है कि चोटें मृतक को शौच के बाद लगी थीं, न कि पहले जैसा कि गुरमेज सिंह, पीडब्लू 3 ने सुझाव दिया था। विद्वान वकील ने यह भी कहा कि रुक्का एक्स. पी.-5 में, जिसे डॉक्टर द्वारा पुलिस स्टेशन भेजा गया था, यह दर्ज किया गया था कि शव को रघुबीर सिंह और मेजर सिंह द्वारा अस्पताल लाया गया था और इसमें अनुपस्थिति से गुरमेज सिंह का नाम स्पष्ट था, जिससे पता चलता है कि घटना के समय या जब मृतक को अस्पताल ले जाया गया था, उस समय गुरमेज सिंह पी. डब्ल्यू. 3 मौजूद नहीं था। विद्वान वकील के अनुसार, अभियोजन पक्ष द्वारा रघुबीर सिंह, पीडब्लू 4 और मेजर सिंह, पीडब्लू 5, जिन्हें केवल जिरह के लिए प्रस्तुत किया जाना अभियोजन पक्ष के मामले में एक गंभीर दुर्बलता

है और गुरमेज सिंह, पीडब्लू 3 की अप्रमाणित गवाही के आधार पर अपीलार्थी की दोषसिद्धि को बनाए रखना इसे असुरक्षित बनाता है।

गुरमेज सिंह, पीडब्लू 3, मृतक का बड़ा भाई है। वह अभियोजन पक्ष द्वारा एकल चश्मदीद गवाह है जिसका परीक्षण किया गया है। अस्पताल में शव के आने के तुरंत बाद डॉक्टर द्वारा पुलिस स्टेशन भेजे गए रुक्का प्रदर्श. पी.-5 में उसका नाम न होने से उस समय घटना स्थल पर गुरमेज सिंह की उपस्थिति के बारे में कुछ संदेह पैदा होता है जब मृतक को गोली मारी गई थी। मानवीय आचरण के सामान्य क्रम में मृतक का असली भाई घायलों के साथ अस्पताल में होता। गुरमेज सिंह और मेजर सिंह पीडब्ल्यू द्वारा मृतक की पोस्टमॉर्टम जांच के समय मृतक की पहचान, जिस पर राज्य के विद्वान वकील पर भरोसा किया गया है, रुक्का प्रदर्श पी-5 से पीडब्ल्यू 3 के नाम की अनुपस्थिति के दोष को ठीक नहीं कर सकता है, क्योंकि पोस्टमॉर्टम परीक्षा अगले दिन 12.7.1984 पर 11.00 सुबह आयोजित की गई थी। अभिलेख पर कोई स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं है, और न ही रुक्का प्रदर्श पी-5 से पीडब्लू3 के नाम की अनुपस्थिति को समझाने के लिए हमारे सामने कोई प्रस्ताव दिया गया है। जिसमें यह दर्ज किया गया था कि रघबीर सिंह और मेजर सिंह मृतक को अस्पताल लाए थे।

यह विवादित नहीं है कि मृतक की मृत्यु बंदूक की गोली लगने से हुई थी लेकिन चुनौती दी गई है कि क्या यह घटना गुरमेज सिंह पीडब्लू 3

द्वारा वर्णित तरीके से हुई थी और क्या गुरमेज सिंह पीडब्लू 3 एक चश्मदीद गवाह है। प्रथम सूचना रिपोर्ट रघुबीर सिंह पीडब्लू 6 द्वारा गुरमेज सिंह, प्रदर्श पी.-4 के बयान के आधार पर दर्ज की गई थी जो अस्पताल में लगभग 11.45 दोपहर 11.7.1984 पर दर्ज की गई थी। इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है कि गुरमेज सिंह पीडब्लू 3, रघुबीर सिंह और मेजर सिंह द्वारा अपने मृत भाई को अस्पताल से हटाने के बारे में जानने के बाद बाद में अस्पताल पहुंचे होंगे। इसके अलावा, हम पाते हैं कि विशेष रिपोर्ट अगले दिन सुबह 6:30 बजे इलाका मजिस्ट्रेट के पास पहुंची। इलाका मजिस्ट्रेट द्वारा विशेष रिपोर्ट की प्राप्ति में देरी के बारे में रिकॉर्ड पर कोई स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं है, जबकि माना जाता है कि इलाका मजिस्ट्रेट का न्यायालय और पुलिस स्टेशन एक-दूसरे के काफी करीब हैं। तथ्य यह है कि पोस्टमॉर्टम जांच के समय पेट और मूत्राशय खाली पाए गए थे, हालांकि इस स्थिति का संकेत देते हैं कि गुरमेज सिंह, पीडब्लू 3 ने जो सशपथ कथन किया था, उसके विपरीत, मृतक ने गोली मारने से पहले शौच कर चुका था, लेकिन इसका निर्णायक नहीं हो सकता है, इस संभावना के रूप में कि मृतक ने चोटें लगने के बाद और मृत्यु से पहले शौच और पेशाब किया होगा की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है।

इस मामले में अभियोजन पक्ष एक सकारात्मक मामले के साथ आया कि गुरमेज सिंह, पीडब्लू 3, के अलावा रघबीर सिंह पीडब्लू 4 और मेजर सिंह पीडब्लू 5 ने भी इस घटना को देखा था। इन दो गवाहों के नाम रुक्का एक्स. पी.-5 में उन व्यक्तियों के रूप में भी उल्लिखित हैं जो शव को अस्पताल लाए थे। अभियोजन पक्ष के मामले को उजागर करने के लिए मामले की परिस्थिति में उनका साक्ष्य आवश्यक था। हालाँकि अभियोजन पक्ष ने उनको परीक्षित नहीं किया और उन्हें अभियुक्त द्वारा प्रतिपरीक्षा के लिए प्रस्तुत किया। लेकिन अभियुक्तों द्वारा उनसे जिरह नहीं की गई। विचारण न्यायालय के रिकॉर्ड से हम पाते हैं कि पीडब्लू4 और पीडब्लू5 दोनों को “जग्गो एयर (1971) एस. सी. 1586 के मामले में उच्चतम न्यायालय” के आलोक में प्रतिपरीक्षा के लिए प्रस्तुत किया। हम इस बात की सराहना करने से चूक जाते हैं कि कैसे एक गवाह से जिरह की जा सकती है, जब उससे मुख्य रूप से परीक्षित नहीं किया गया है, यानी जब ऐसा कुछ भी नहीं है जिसके संबंध में उससे जिरह की जा सकती हो।

इस स्तर पर साक्ष्य अधिनियम की धारा 138 का उल्लेख करना उचित होगा जो प्रदान करता है:

"138. परीक्षण का क्रम। - गवाहों से पहले पूछताछ की जाएगी - प्रमुख तब (यदि प्रतिकूल पक्ष ऐसा चाहता है) प्रतिपरीक्षा की जाती है, फिर (यदि पक्ष उसे ऐसा कहना चाहता है) तो फिर से परीक्षण किया जाता है।

परीक्षा और प्रतिपरीक्षा प्रासंगिक तथ्यों से संबंधित होनी चाहिए। परंतु प्रति-परीक्षा तथ्यों तक सीमित होना आवश्यक नहीं है, जिस पर गवाह ने अपनी परीक्षण पर गवाही दी।

पुनः परीक्षा के लिए निर्देश :- पुनः परीक्षा का निर्देश दिया जाएगा। उस संदर्भित मामलों की व्याख्या के लिए प्रतिपरीक्षा; न्यायालय की अनुमति से, और यदि नया मामला पुनः जाँच में प्रस्तुत किया जाता है, प्रतिकूल पक्ष आगे प्रति-परीक्षण कर सकता है।"

इस प्रकार यह देखा जाएगा कि धारा 138 (उपर्युक्त) में परिकल्पना की गई है कि -गवाह से पहले मुख्य परीक्षा की जाएगी और फिर प्रति-परीक्षा की जाएगी, और जाँच के लिए और कोई स्पष्टीकरण मांगने के लिए, गवाह फिर से अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षित किया जा सकता है। हमारी राय में, इसका, केवल प्रतिपरीक्षा के लिए गवाह प्रस्तुत करने का कोई अर्थ नहीं है। वास्तव में, गवाह को प्रतिपरीक्षा के लिए स् प्रस्तुत करना, गवाह को अभियोजन पक्ष द्वारा छोड़ने के बराबर है, क्योंकि वह मुख्य रूप से उससे पूछताछ करने का विकल्प नहीं चुनता है। हालाँकि, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 के अधिनियमन के बाद से सत्र परीक्षणों में गवाहों

को जिरह के लिए पेश करने की प्रथा का अक्सर सहारा लिया गया था। इस तरह की प्रथा का सहारा लेने के पीछे का कारण, जो निस्संदेह धारा 138 (उपरोक्त) के साथ असंगत है, खारिज करने के लिए उपयुक्त है। उस संहिता के तहत, जो 1955 के अधिनियम 26 द्वारा इसके संशोधन से पहले थी, एक पूर्ण-स्तरीय मजिस्ट्रेट जांच आयोजित की जानी थी, एक ऐसे मामले में जिसकी सुनवाई विशेष रूप से सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय द्वारा की जा सकती थी, उसके अध्याय XVIII में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार और उस जांच में अभियोजन पक्ष को अपने सभी गवाहों से पूछताछ करने की आवश्यकता थी। उस संहिता की धारा 288-कि तहत कमिटिंग मजिस्ट्रेट द्वारा इस प्रकार अभिलिखित गवाहों के साक्ष्य को, सत्र न्यायाधीश के विवेक पर, मुकदमे में ठोस साक्ष्य के रूप में माना जा सकता है। अक्सर, अभियोजन पक्ष उपरोक्त प्रावधान का लाभ उठाते हुए, इन विवेकपूर्ण बयानों, जिनकी वे नए सिरे से जांच करने का इरादा नहीं रखते थे, को मुकदमे में अपने साक्ष्य के रूप में दर्ज करने और फिर उन्हें जिरह के लिए प्रस्तुत करने के लिए सत्र न्यायालय से अनुमति मांगता था और प्राप्त करता था। दूसरे शब्दों में, अभियोजन पक्ष द्वारा अधीनस्थ न्यायालय का रिकॉर्ड पेश किया जाता और मुकदमे के दौरान अपने सबूत के रूप में कमिटिंग मजिस्ट्रेट के समक्ष अपने कहने पर दर्ज कुछ गवाहों की गवाही पर भरोसा किया जाता और फिर उन्हें बचाव पक्ष

द्वारा जिरह के लिए प्रस्तुत किया जाता था। यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि 1955 का अधिनियम 26, जिसने 1898 की संहिता में संशोधन किया था, उसने पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित मामलों के संबंध में कोमिटल जांच में अभियोजन पक्ष के गवाहों की परीक्षा को केवल उन लोगों के लिए प्रतिबंधित कर दिया था जिन्हें केवल घटना का एक दृष्टिगत संस्करण देना था।

सवाल यह है कि क्या ऐसी प्रथा धारा 138 (उपर्युक्त) के दृष्टिकोण से कानूनी और वैध थी और, यदि हां, तो इसे किस हद तक और किस तरीके से अपनाया जा सकता है, विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा विचार के लिए सामने आया।

वीरा कोरवन और अन्य बनाम सम्राट, ए आइ आर (1929) मद्रास, 906 में मद्रास उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने राय दी कि केवल अभियोजन पक्ष के गवाह को जिरह के लिए पेश करना एक ऐसी प्रथा नहीं है जिसे विशेष रूप से हत्या के मामले में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए क्योंकि प्रक्रिया एक अभियुक्त के लिए अनुचित होगी।

सादेप्पा सिरेप्पा मुतगी और अन्य बनाम सम्राट, ए. आइ. आर. (1942) बॉम्बे 37 बीमाउंट, सी. जे. ने बॉम्बे उच्च न्यायालय की खंड पीठ की ओर से बोलते हुए श्रीमान मुख्य न्यायाधीश ने कहा:

" दूसरा काकेरी गवाह शंभू है, (Ex.34), और उनके संबंध में बहुत अनियमित क्रम अपनाया गया था। उन्हें क्रॉस के लिए प्रस्तुत किया गया था। यह जिरह के लिए गवाहों को प्रस्तुत करने की प्रथा, जिसे निस्संदेह अक्सर अपनाया जाता है, S.138 साक्ष्य अधिनियम के साथ असंगत है, जो कहता है कि गवाहों को पहले परीक्षित किया जाएगा, और फिर, यदि प्रतिकूल पक्ष ऐसा चाहता है, तो प्रतिपरीक्षा की जाती है, और यदि, पक्षकार जिन्होंने बुलाया है यदि चाहें, फिर से जांच की जाती है। यह स्पष्ट है कि यदि एक गवाह से बचाव पक्ष द्वारा बिना कुछ मुख्य परीक्षण के, उसकी प्रति- परीक्षा नहीं की जा सकती है, जो भी, प्रक्रिया का नाम वर्णित किया जाये। प्रतिपरीक्षा का अभ्यास केवल द्वितीयक महत्व के गवाहों के मामलों में अपनाई जानी चाहिए। जहाँ अभियोजन पक्ष को पहले ही विशेष बिंदु पर पर्याप्त साक्ष्य मिल चुका है, और एक साक्ष्य के परीक्षण में अधीनस्थ न्यायालय में समय बर्बाद नहीं करना चाहते हैं, लेकिन उसी समय अभियुक्त को ऐसे गवाह की प्रतिपरीक्षा के अधिकार से वंचित नहीं करना चाहते हैं वे उसे प्रतिपरीक्षा के लिए प्रस्तुत करते हैं। लेकिन, मुझे लगता है, कड़ाई से बोलते हुए, अभियोजन पक्ष द्वारा गवाह से पूछा जाना चाहिए, निश्चित रूप से, अभियुक्त के वकील की सहमति से और न्यायाधीश की अनुमति, कि अधीनस्थ न्यायालय में उसका साक्ष्य सच है। यदि वह अपने साक्ष्य की सच्चाई के बारे में एक सामान्य उत्तर देता है, अधीनस्थ

न्यायालय में, उससे जिरह की जा सकती है। लेकिन उसे परीक्षित किया जाना हाई होगा उसे प्रतिपरीक्षण करने से पहले। हालाँकि, प्रति- परीक्षा के लिए गवाह प्रस्तुत करने की प्रथा निश्चित रूप से महत्वपूर्ण चश्मदीद गवाह के मामले में नियोजित नहीं किया जाना चाहिए"। (ज़ोर दिया गया)।

सम्राट बनाम कासामल्ली मिर्जल्ली में बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक पूर्ण पीठ, ए. आई. आर. (1942) बॉम्बे, 71 ने ब्यूमाउंट, सी. जे. (ऊपर) की राय को मंजूरी दी और बिना किसी अनिश्चित शब्दों में क्रॉस-एक्समिनेशन के लिए गवाह देने की प्रथा की "निंदा" की।

केसर सिंह व अन्य बनाम राज्य ए. आई. आर. (1954) पंजाब, 286 के मामले में पंजाब उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 137 और 138 के प्रावधानों का विश्लेषण करने के बाद कहा गया:

"इस तथ्य का दूसरा गवाह जय राम P.W.21 है जिसे जिरह के लिए प्रस्तुत किया गया था, लेकिन उनकी जिरह नहीं की गई। मेरी राय में कोई सबूत नहीं है। गवाह के परीक्षण के संबंध में कानून साक्ष्य अधिनियम धारा 137 और 138 में निहित हैं। उस अधिनियम में एक गवाह को उसकी जाँच किए बिना प्रतिपरीक्षा के लिए प्रस्तुत करने की अनुमति देने के लिए कोई प्रावधान नहीं है और यह अभ्यास अधिनियम के धारा.138 का विरोध करता है।" (ज़ोर दिया गया)

धीरेंद्र नाथ बनाम राज्य, ए. आइ. आर. (1952) कलकत्ता, 621,
कलकत्ता उच्च न्यायालय के खंड पीठ ने अभिनिर्धारित कियाः.

"एक प्रकार का मामला होता है जिसमें गौण महत्व के गवाह होते हैं, जिनका परीक्षण कमिटिंग मजिस्ट्रेट के समक्ष होता है, वे हैं सत्र न्यायालय के समक्ष नहीं बुलाया गया, क्योंकि अभियोजन पक्ष मानता है कि इसके पास संबंधित बिंदु पर पहले से ही पर्याप्त सबूत हैं और फिर बचाव के लिए निष्पक्षता में, यह गवाह प्रतिपरीक्षा के लिए प्रस्तुत करता है। लेकिन यह तथ्य कि गवाह प्रतिपरीक्षा के लिए प्रस्तुत है, का अर्थ है और इसका तात्पर्य है कि मुख्य परीक्षा की जा चुकी है। जहाँ तक मैं देख सकता हूँ, केवल व्यावहारिक तरीका जिसमें एक गवाह को प्रति-परीक्षा के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है, आम तौर पर उससे पूछना एक ही सवाल से हो सकता है, सत्र न्यायालय में, कि क्या उसके द्वारा दिए गए बयान कमिटिंग मजिस्ट्रेट के सामने सत्य हैं और उनके जवाब पर मजिस्ट्रेट की अदालत के बयान प्रस्तुत करना जो तब मुख्य परीक्षा के रूप में काम करेगी। जब तक कि मुख्य परीक्षा को अभिलेख में नहीं लाया जाता है उस तरह से, मुझे समझ में नहीं आता कि डिफेंस क्या क्रॉस करेगा जिरह के लिए प्रस्तुत किए गए गवाह से। इस मामले में अभिलेख से प्रतीत होता है कि गवाह का साक्ष्य इससे पहले कि कमिटिंग मजिस्ट्रेट को रिकॉर्ड पर

लाया गया था। इन परिस्थितियों में, प्रतिपरीक्षा के लिए प्रस्तुत करना मेरे लिए लगभग अर्थहीन प्रतीत होता है।"

छोटा सिंह बनाम राज्य, ए. आइ. आर. (1964) पंजाब, 120 पंजाब उच्च ने अभिनिर्धारित किया:

"एक गवाह को जिरह के लिए पेश करना लगभग एक गवाह को छोड़ देने के समान है। कानून में ऐसा कुछ भी नहीं है जो इस तरह के कदम को उचित ठहराता हो। विचारण न्यायालय केवल अपना बोझ हल्का करने के लिए गवाहों से पूछताछ करने का यह तरीका अपनाते हैं, लेकिन इस बात का एहसास नहीं है कि वर्तमान हत्या मामले की तरह एक गंभीर मामला जब विद्वान ट्रायल जज वजीरा पी.डब्लू.5 की जांच करने में विफल रहे, तो इसमें बहुत गंभीरता से कर्तव्य की चूक हुई है।"

थझाथेथिल हमसा बनाम केरल राज्य, ए. आइ. आर. (1967) केरल, 16 में केरल उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ ने कहा:

" इस संबंध में हम उस गलत धारणा को स्पष्ट करना चाहते हैं जो प्रतिपरीक्षा के लिए चश्मदीद गवाहों को पेश करने में अभियोजन पक्ष द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया का औचित्य के बारे में विद्वान न्यायाधीश ने इस व्यक्त की। पी. डब्ल्यू. 10, जिसने एक चश्मदीद गवाह के रूप में अदालत में गवाही दी थी, उसको प्रति परीक्षा के लिए सत्र न्यायालय में प्रतिपरीक्षा

के लिए तब प्रस्तुत किया गया था, जब उसने खुला बयान दिया कि उसने जांच न्यायालय में घटना के बारे में जो कुछ भी वह जानता है उसे सही ढंग से कहा है। विद्वान न्यायाधीश ने स्पष्ट रूप से मन जुरूल हक बनाम बिहार राज्य, ए. आई. आर. (1958) पैट 422 में पटना उच्च न्यायालय द्वारा की गई एक टिप्पणी पर भरोसा किया है, यह पता लगाने के लिए कि ऐसी प्रक्रिया उचित है। लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है। विद्वान न्यायाधीश द्वारा जिस निर्णय पर भरोसा किया गया था, वह इस सिद्धांत को इस प्रकार व्यक्त करके शुरू हुआ:

"गवाहों को पेश करने की प्रथा से काफी भ्रम पैदा होता है और इसकी निंदा की जानी चाहिए। एक महत्वपूर्ण गवाह को केवल प्रस्तुत नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि उसे शपथ लेनी चाहिए और अभियोजन पक्ष द्वारा सबूत देने के लिए कहा जाना चाहिए। निविदा को गौण महत्व के गवाह सीमित किया जाना चाहिए।"

इस प्रकार, यह देखा गया है कि बॉम्बे, केरल, कलकत्ता, मद्रास और पंजाब उच्च न्यायालयों ने संविधान की धारा 283 के प्रावधानों के बावजूद 1898 की संहिता ने लगातार यह विचार रखा कि ऐसी कोई प्रक्रिया नहीं है जिसके द्वारा अभियोजन को केवल प्रतिपरीक्षा के लिए गवाह पेश करने की अनुमति दी गई है, बिना किसी मुख्य परीक्षा के जिसके संबंध में ऐसे गवाह से प्रतिपरीक्षा की जा सकती है। जिरह के लिए एक गवाह को प्रस्तुत

करने की प्रथा को लगातार हतोत्साहित किया गया है और यहां तक कि उन उच्च न्यायालयों द्वारा अस्वीकार किया गया है और हमारी राय में सही है। हमारा ध्यान किसी अन्य उच्च न्यायालय के किसी भी फैसले की ओर नहीं खींचा गया है जिसने इसके विपरीत दृष्टिकोण अपनाया हो।

यू. पी. राज्य और अन्य बनाम जग्गो उर्फ जगदीश और अन्य, ए. आई. आर. (1971) एस. सी. 1586 जिसे संदर्भित किया गया है और जिस पर अभियोजन द्वारा भरोसा किया गया है।

केवल हमारी राय में पी. डब्ल्यू. 4 और पी. डब्ल्यू. 5 को प्रतिपरीक्षा के लिए निविदा देने की प्रक्रिया को अपनाने के लिए अभियोजन पक्ष और अधीनस्थ न्यायालय की उचित रूप से सराहना नहीं की गई है और इसका गलत उपयोग किया गया है। उस निर्णय को, कानूनी प्रस्ताव के रूप में, यह निर्धारित करने के लिए नहीं पढ़ा जा सकता है कि एक गवाह को मुख्य परीक्षा के बिना भी जिरह के लिए "निविदा" किया जा सकता है। यदि सक्षम न्यायालय द्वारा गवाह का कोई पूर्व बयान दर्ज किया गया है या ट्रायल कोर्ट में कोई हलफनामा और गवाह मुकदमे में उस पूर्व कथन की शुद्धता की गवाही देता है, यह (औपचारिक प्रकृति के गवाहों के कुछ मामले में) जैसा कि पहले देखा गया है कि वे अनुज्ञप्त हैं सही होने की शपथ लेने के बाद उसे प्रतिपरीक्षा के लिए निविदा देने के लिए, क्योंकि उस घटना में कि पहले का कथन गवाह की मुख्य परीक्षण के रूप में माना

जाता है लेकिन यह केवल प्रतिपरीक्षा के लिए एक गवाह प्रस्तुत करने के और अभिलेख पर कोई भी मुख्य परीक्षा ना होना समकक्ष नहीं है। जग्गो के मामले में (उपर्युक्त) इस न्यायालय की एक पीठ, इस सवाल पर विचार कर रही थी कि क्या केवल प्रार्थना पत्र प्रस्तुति अभियोजन पक्ष द्वारा इस आशय का एक आवेदन कि एक निश्चित गवाह को "जीता गया" इस आरोप का निर्णायक था कि वह इतना "जीता गया था" और इसलिए अभियोजन पक्ष को अपने दायित्व से मुक्त कर दिया गया था मुकदमे में उसे मुक्त करें। प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया गया था और यह उस संदर्भ में था, कि इस न्यायालय ने टिप्पणी की:

"अपीलार्थी की ओर से यह कहा गया कि रमेश चंद को प्रभावित कर लिया गया है इसलिए अभियोजन पक्ष रमेश को नहीं बुला सकता। उच्च न्यायालय ने सही कहा कि केवल एक आवेदन की प्रस्तुति इस प्रभाव के लिए कि एक गवाह को प्रभावित कर लिया गया था, निर्णायक नहीं था। ऐसी स्थिति में रमेश को अभियुक्त द्वारा प्रतिपरीक्षा के लिए पेश किया जा सकता था। इससे सही तथ्य सामने आए होंगे। अगर रमेश एक चश्मदीद गवाह था, तो अभियुक्त उच्च साक्ष्य का परीक्षण करने का हकदार था। विशेष रूप से जब लालू पर रमेश से बात करने का आरोप लगाया गया था।" (ज़ोर दिया)

इसलिए खंड पीठ उस मामले में एक विशिष्ट तथ्य स्थिति पर विचार कर रही थी और उस संदर्भ में भी यह कहा गया था कि गवाह को "अभियुक्त द्वारा जिरह के लिए पेश किया जा सकता था" और "अभियुक्त अपने साक्ष्य का परीक्षण करने के हकदार थे"। इसलिए, जग्गो के मामले में खंड पीठ की टिप्पणियाँ इस विचार का समर्थन नहीं करती हैं कि एक महत्वपूर्ण गवाह को केवल प्रतिपरीक्षा के लिए "प्रस्तुत" किया जा सकता है। इस न्यायालय के किसी निर्णय के बचाव को अलग-अलग नहीं पढ़ा जा सकता है और उस संदर्भ से विच्छेद हो गया जिसमें समान दिए गए थे और किसी भी न्यायालय द्वारा इस न्यायालय के फैसले से एक वाक्य निकालना अनुचित है, उस संदर्भ से विरक्त हो जाता है जिसमें इसे दिया गया था, और इस तरह से एक वाक्या एक अलग कानून के रूप में माना जाता है। हमारी राय में, जग्गो के मामले (उपरोक्त) में निर्णय की गलत सराहना की गई है और उस निर्णय की व्याख्या उच्चतम न्यायालय की ओर से अभियोजन पक्ष को बिना किसी मुख्य परीक्षा के,केवल जिरह के लिए गवाह देने की प्रथा को अपनाने के लिए मंजूरी के रूप में नहीं की जा सकती है, जिसके संबंध में गवाह से जिरह की जानी है। यह सब फैसले में जग्गो का मामला (ऊपर) इस बात पर जोर देता है कि अभियोजक का केवल यह कहना कि एक विशेष गवाह को कभी प्रभावित किया गया है, इसका निर्णायक नहीं है। और न्यायालय को उसी को यंत्रवत रूप से

स्वीकार नहीं करना चाहिए और अभियोजक को ऐसे गवाह से पूछताछ करने के अपने दायित्व से मुक्त कर देना चाहिए। इस कारण से पीठ ने सुझाव दिया कि जहां अभियोजन पक्ष इस तरह का आरोप लगाता है, उसे गवाह को उपस्थित रखना चाहिए और उसे पेश करना चाहिए ताकि बचाव पक्ष ऐसे गवाह से उसके साक्ष्य के साथ-साथ अभियोजन पक्ष के आरोपों का परीक्षण करने और रिकॉर्ड पर सच्चाई को सामने लाने के लिए प्रतिपरीक्षा कर सके। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के लागू होने के बाद, जिसने 1898 की संहिता को प्रतिस्थापित किया, प्रतिबद्धता कार्यवाही में साक्ष्य की रिकॉर्डिंग को पूरी तरह से समाप्त कर दिया गया है और उस संहिता की धारा 288 को हटा दिया गया है। नतीजतन कुछ उच्च अधिकारियों द्वारा सुझाए गए क्रम अदालतों ने पहले गवाहों को पेश करने के संबंध में दिए गए फैसलों का हवाला दिया था प्रतिपरीक्षा के लिए जिसकी समादेशित न्यायालय में जाँच की गई थी, और अधिक प्रासंगिक या उपलब्ध नहीं है। जागगो का मामला, जिसका फैसला किया गया था जब 1988 की संविदा क्रियान्वित थी, अतः प्रस्तुत मामले में 1973 की संविदा के क्रियान्वयन में लागू नहीं किया जा सकता। ऐसा समझते हुए यह स्पष्ट है की अधीनस्थ न्यायालय ने ग़लत तौर पर अभियोजन को पी. डब्ल्यू. 4 और पी. डब्ल्यू. 5 को प्रति परीक्षण के लिए प्रस्तुत करने की अनुमति दी गयी है। दोनों पी. डब्ल्यू. 4 और पी. डब्ल्यू. 5, अभियोजन

पक्ष का मामले के अनुसार घटना के चश्मदीद गवाह और मृतक को अस्पताल आए थे। उनका साक्ष्य एक महत्वपूर्ण प्रकृति का था जो अभियोजन पक्ष की कहानी को उजागर करने के लिए आवश्यक था। इसका प्रभाव केवल प्रतिपरीक्षा के लिए उनको प्रस्तुत किया जाना अभियोजन पक्ष की मुकदमे में विफलता के बराबर है। उनकी गैर-परीक्षा, हमारे राय में, अभियोजन मामले की विश्वसनीयता को गंभीर रूप से प्रभावित करती है और यह अपनी विश्वसनीयता से महत्वपूर्ण रूप से विमुख करता है।

इस मामले में एक और कमजोरी है। हम पाते हैं कि जहां पीडब्लू 6 द्वारा एक खाली बरामद किया गया था, वहीं एएसआई रघुबीर सिंह को गिरफ्तारी के समय अपीलार्थी के कब्जे से मौके से बरामद किया गया था और कुछ गोलियों के साथ एक पिस्तौल जब्त की गई थी, फिर भी अभियोजन पक्ष ने बरामद की गई खाली और जब्त की गई पिस्तौल को परीक्षण और विशेषज्ञ राय के लिए एक बैलिस्टिक विशेषज्ञ रिपोर्ट के लिए नहीं भेजा। तुलना हो सकती है अपराध और अभियुक्त के बीच संबंध साक्ष्य प्रदान किया। यह फिर से है अभियोजन पक्ष की ओर से चूक जिसके लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं है या तो अधीनस्थ न्यायालय में या हमारे सामने प्रस्तुत किया गया था। शायद ही इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि उन मामलों में जहां बंदूक जैसे हथियारों से चोटें आती हैं, बैलिस्टिक विशेषज्ञ की राय का काफी महत्व होता है एक अभियुक्त को

अपराध से जोड़ने के लिए, जहाँ जाँच के दौरान दोनों बंदूक और अपराध का कारतुस बरामद किया जाता है। विशेषज्ञ की राय देने में विफलता ऐसे मामलों में विचारण न्यायालय के समक्ष काफी हद तक अभियोजन के मामले की विश्वसनीयता प्रभावित होती है।

अभिलेख पर सामग्री के महत्वपूर्ण विश्लेषण से हम पाते हैं कि पी. डब्ल्यू. 3 गुरमेज सिंह मृतक का भाई, की एकमात्र गवाही पर भरोसा करना सुरक्षित नहीं होगा। स्वतंत्र पुष्टि के बिना, हमारे द्वारा ऊपर बताई गई दुर्बलताएँ जो उनकी गवाही को पूरी तरह से विश्वसनीय नहीं बताती हैं और चूंकि वर्तमान मामले में ऐसा कोई स्वतंत्र पुष्टि रिकॉर्ड पर उपलब्ध नहीं है, अपीलार्थी की दोषसिद्धि को बनाए रखने के लिए केवल पी. डब्ल्यू. 3 की गवाही पर भरोसा करना असुरक्षित होगा। अभियोजन पक्ष अपीलार्थी के खिलाफ मामला संदेह से परे स्थापित करने में सक्षम नहीं हुआ है। इसलिए, अधीनस्थ न्यायालय अपीलार्थी को दोषी ठहराना और सजा देने की गलती में पड़ गई। उसकी दोषसिद्धि और सजा कायम नहीं रखी जा सकती। परिणामस्वरूप यह अपील सफल होती है और इसकी अनुमति दी जाती है। अपीलार्थी की दोषसिद्धि और सजा को रद्द कर दिया जाता है। अपीलार्थी जमानत पर है। उसके जमानत बंधपत्र उन्मोचित माने जाएँगे।

अपील स्वीकार।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" की सहायता से अनुवादक अधिवक्ता अर्जिता सिंह द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।